

श्रीमद्भागवतम् स्कन्ध 11 अध्याय 16: भगवान् की विभूतियाँ

5 October 2026



उद्धव की प्रार्थना पर भगवान् श्रीकृष्ण अपनी विभूतियों का तेजस्वी जाल उद्घाटित करते हैं — सूर्य तथा हिमालय में, पावन गंगा तथा अक्षर ॐ में अन्तर्निहित — और फिर अपने प्रिय भक्त को समस्त इन्द्रियाँ पुनः अपनी ओर समेटने का आह्वान करते हैं।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

श्रीमद्भागवतम् विज्ञप्ति में आपका स्वागत है, जो श्रीमद्भागवत महापुराण की पावन कथाओं तथा शिक्षाओं के माध्यम से एक भक्तिपूर्ण यात्रा है। द्वारका की शान्ति में, उद्धव अपने भगवान् से वह प्रश्न पूछते हैं जिसने युगों-युगों से साधकों को आकर्षित किया है: सृष्टि में सर्वत्र छिपी किन विशेष विभूतियों का चिन्तन करके भक्त सरलतापूर्वक उन्हें स्मरण तथा प्राप्त कर सकता है? भगवान् श्रीकृष्ण विस्तार से उत्तर देते हैं, सूर्य-तारों, पावन नदियों तथा मौन पर्वतों में अपनी आभा प्रवाहित करते हुए, और अन्त में उद्धव को उस एक अभ्यास की ओर कोमलता से लौटाते हैं जो समस्त बिखरी विभूतियों को हृदय में समेट लेता है।

अध्याय की जानकारी

- शास्त्र: श्रीमद्भागवत महापुराण

- स्कन्ध: 11 (एकादश स्कन्ध)
- अध्याय: 16 (षोडश प्रवचन)
- अध्याय शीर्षक: भगवान् की विभूतियाँ
- प्रधान वक्ता: श्रीकृष्ण, उद्धव को उपदेश देते हुए; समस्त सुकदेव गोस्वामी द्वारा राजा परीक्षित को कहा गया
- प्रधान श्रोता: उद्धव; तथा राजा परीक्षित
- मुख्य स्थान: द्वारका, भगवान् के उद्धव के साथ चलते संवाद में
- केन्द्रीय विषय: भगवान् सृष्टि में व्याप्त अपनी दिव्य विभूतियों का वर्णन करते हैं, तथा भक्त को वाणी, मन, प्राण तथा इन्द्रियों को केवल अपनी ओर समेटने का आह्वान करते हैं
- प्रधान श्लोक-सीमा: स्कन्ध 11, अध्याय 16, श्लोक 1-44
- मूल संस्करण: गीता प्रेस श्रीमद्भागवत महापुराण

उद्धव की भगवान् की गुप्त विभूतियों को जानने की उत्कण्ठा

उद्धव अपने भगवान् के समक्ष झुककर अपने हृदय की पूर्णता से बोलते हैं।

श्रीउद्धव उवाच

त्वं ब्रह्म परमं साक्षादनाद्यन्तमपावृतम् ।

सर्वेषामपि भावानां त्राणस्थित्यप्योद्धवः ॥ १ ॥

śrī-uddhava uvāca tvam brahma paramam sāṅśād anādy-antam apāvṛtam sarveṣām api bhāvānām trāṇa-sthity-apyayodbhavaḥ

अर्थ: उद्धव ने कहा: आप साक्षात् परम ब्रह्म हैं, आदि-अन्त रहित तथा माया से कभी आच्छादित नहीं; समस्त विद्यमान वस्तुओं की रक्षा, पालन, प्रलय तथा उत्पत्ति के आप ही कारण हैं। (स्कन्ध 11, अध्याय 16, श्लोक 1)

वे कहते हैं कि केवल वे ब्राह्मण ही, जो वेदों के यथार्थ को जानते हैं, भगवान् की उस प्रकार उपासना कर सकते हैं जैसे वे वास्तव में हैं — समस्त प्राणियों में, उच्च तथा निम्न, समान रूप से विराजमान — यह उपासना अशुद्ध मन के लिए अभी भी अगम्य है। भगवान् अपने उन्हीं रूपों के नाम बताएँ जिनका चिन्तन करके महान् ऋषि परम सिद्धि को प्राप्त होते हैं। भगवान् प्रत्येक प्राणी के भीतर छिपे हुए उसके जीवनदायी के रूप में विचरते हैं, फिर भी भगवान् की अपनी माया से मोहित प्राणी सब कुछ देखते हुए भी उन्हें, अपने साक्षी को, देख नहीं पाते। अतः उद्धव अपनी प्रार्थना सीधे प्रस्तुत करते हैं।

याः काश्च भूमौ दिवि वै रसायां
विभूतयो दिक्षु महाविभूते ।
ता मह्यमाख्याह्यनुभावितास्ते
नमामि ते तीर्थपदाङ्घ्रिपद्मम् ॥ ५ ॥

*yāḥ kās ca bhūmau divi vai rasāyām vibhūtayō dikṣu mahā-vibhūte tā mahyam ākhyāhy
anubhāvitās te namāmi te tīrtha-padāṅghri-padmam*

अर्थ: हे महाविभूते! पृथ्वी पर, स्वर्ग में, पाताल में अथवा दिशाओं में जो भी आपकी, आपकी ही दिव्य महिमा से सम्पन्न, विभूतियाँ विद्यमान हैं, हे अनन्त पराक्रम वाले भगवान्! उन्हें कृपया मुझे बताइए; मैं आपके उन चरण-कमलों को प्रणाम करता हूँ जो समस्त तीर्थों के आश्रय हैं। (स्कन्ध 11, अध्याय 16, श्लोक 5)



उद्धव झुककर भगवान् से प्रार्थना करते हैं कि वे उन विशेष विभूतियों के नाम बताएँ, जो सृष्टि में सर्वत्र छिपी हैं, जिनके द्वारा भक्त उन्हें सरलतापूर्वक स्मरण तथा प्राप्त कर सके (श्लोक 5)।

भगवान् समस्त प्राणियों के आत्मा, सुहृद् तथा ईश्वर

उत्तर देने से पहले भगवान् एक कोमल स्मृति का उल्लेख करते हैं। यही प्रश्न, वे कहते हैं, एक बार अर्जुन ने भी कुरुक्षेत्र में, जब वह अपने ही बन्धुओं से युद्ध करने को अनिच्छुक खड़ा था, उनसे पूछा था। सामान्य मनुष्य की भाँति सोचते हुए — “मैं मारने वाला हूँ, और यह व्यक्ति मेरे द्वारा मारा जा रहा है” — तथा राज्य के लिए अपने ही कुटुम्बियों का वध करना पाप समझकर, अर्जुन युद्ध से विरत हो गया था। भगवान् के अपने ही तर्क से उस मोह से जागृत होकर, उसने युद्ध-भूमि के अग्रभाग में उन्हीं भावों से भगवान् से प्रश्न किया था जिस भाव से उद्धव अब प्रश्न कर रहे हैं। भगवान् उद्धव को वही उत्तर देते हैं जो उन्होंने वहाँ दिया था।

अहमात्मोद्धवामीषां भूतानां सुहृदीश्वरः ।
अहं सर्वाणि भूतानि तेषां स्थित्युद्भवप्ययः ॥ ९ ॥

*aham ātmoddhavāmīṣāṁ bhūtānāṁ suhṛd īśvaraḥ ahaṁ sarvāṇi bhūtāni teṣāṁ sthity-
udbhavāpyayaḥ*

अर्थ: हे उद्धव! मैं इन प्राणियों का आत्मा, उनका सुहृद् तथा उनका ईश्वर हूँ; मैं ही समस्त प्राणी हूँ, और मैं ही उनकी उत्पत्ति, स्थिति तथा प्रलय हूँ। (स्कन्ध 11, अध्याय 16, श्लोक 9)

काल, मन तथा पावन अक्षर ॐ में अन्तर्निहित

इस आधार से भगवान् अपनी महान् गणना का आरम्भ करते हैं।

अहं गतिर्गतिमतां कालः कलयतामहम् ।
गुणानां चाप्यहं साम्यं गुणिन्यौत्पत्तिको गुणः ॥ १० ॥

*aham gatir gatimatāṁ kālāḥ kalayatām aham guṇāṇāṁ cāpy ahaṁ sāmyaṁ guṇiny autpattiko
guṇaḥ*

अर्थ: मैं गतिमानों की गति हूँ, और वश में करने वालों में से मैं काल हूँ; मैं तीनों गुणों की साम्यावस्था हूँ, और गुणी वस्तु का नैसर्गिक गुण भी मैं ही हूँ। (स्कन्ध 11, अध्याय 16, श्लोक 10)

वे कहते हैं कि तीनों गुणों से उत्पन्न पदार्थों में वे सूत्र हैं, विशाल वस्तुओं में महत्तत्त्व, सूक्ष्म तत्त्वों में जीव, और जीतने में कठिन वस्तुओं में मन (श्लोक १०-११)। वेदों में वे उनके प्रथम आचार्य हैं।

हिरण्यगर्भो वेदानां मन्त्राणां प्रणवस्त्रिवृत् ।
अक्षराणामकारोऽस्मि पदानिच्छन्दसामहम् ॥ १२ ॥

*hiraṇyagarbho vedānāṁ mantrāṇāṁ praṇavas tri-vṛt akṣarāṇām a-kāro 'smi padāni cchandasām
aham*

अर्थ: वेदों में मैं उनके प्रथम आचार्य ब्रह्मा हूँ; मन्त्रों में मैं त्रिवर्णात्मक प्रणव, ॐ हूँ; अक्षरों में मैं अकार हूँ, और छन्दों में मैं गायत्री हूँ। (स्कन्ध 11, अध्याय 16, श्लोक 12)



भगवान् प्रकट करते हैं कि वेदों में वे उनके प्रथम आचार्य ब्रह्मा हैं, मन्त्रों में वे अक्षर ॐ हैं, तथा छन्दों में वे गायत्री हैं (श्लोक 12)।

देवताओं, ऋषियों तथा नक्षत्रों में

भगवान् की महिमा प्रत्येक वर्ग के श्रेष्ठतम में चमकती है। देवताओं में वे इन्द्र हैं; वसुओं में अग्नि; अदिति के पुत्रों में विष्णु; रुद्रों में नीललोहित, भगवान् शिव। ब्रह्मा से उत्पन्न ऋषियों में वे भृगु हैं; राजर्षियों में स्वायम्भुव मनु; देवर्षियों में नारद; गौओं में कामधेनु। सिद्धों में वे कपिल हैं; पक्षियों में गरुड़; प्रजापतियों में दक्ष; पितरों में अर्यमा। दैत्यों में वे उनके राजा प्रह्लाद हैं; नक्षत्रों तथा ओषधियों में चन्द्रमा; यक्षों तथा राक्षसों में कुबेर, धन के स्वामी। वे गजेन्द्रों में ऐरावत हैं, जलचरों में वरुण, तेजस्वियों में सूर्य, तथा मनुष्यों में राजा। वे अश्वों में उच्चैःश्रवा हैं, धातुओं में सुवर्ण, दण्ड देने वालों में यम, सर्पों में वासुकि। वे सर्पराजों में अनन्त हैं, पशुओं में सिंह, आश्रमों में संन्यास, तथा वर्णों में ब्राह्मण (श्लोक १३-१९)।

नदियों, पर्वतों तथा पावन अग्नियों में

पावन स्रोतों में, भगवान् कहते हैं, वे एक सबसे ऊपर हैं।

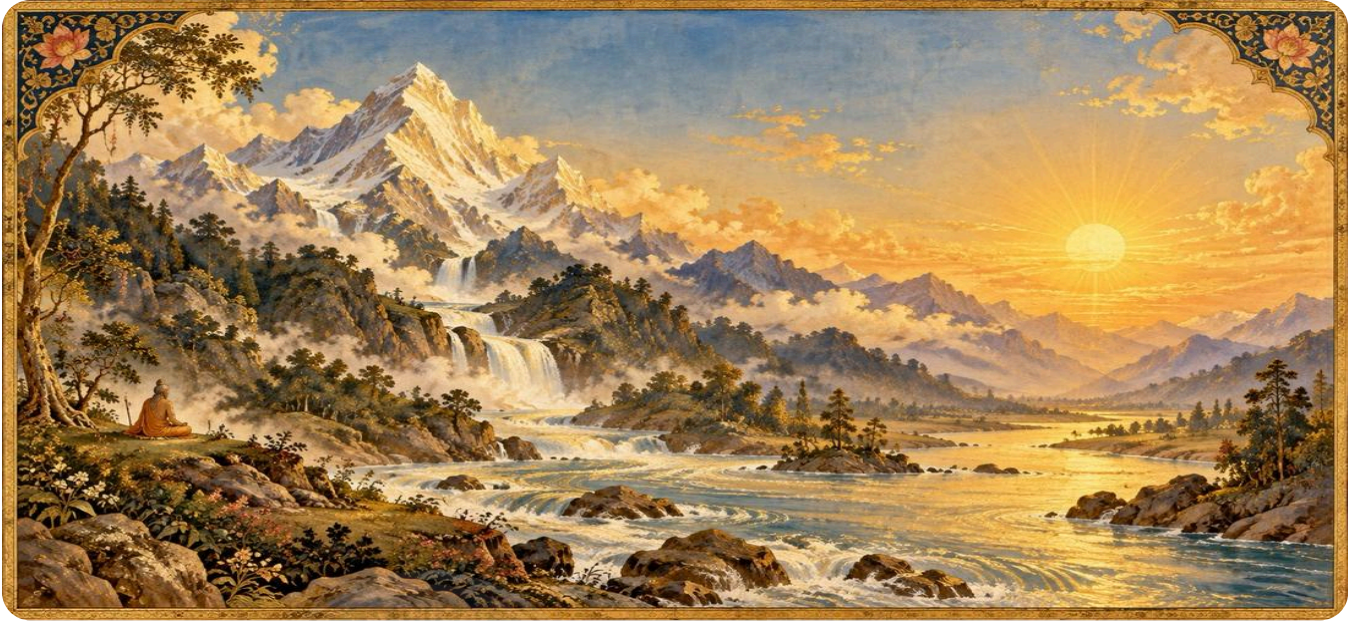
तीर्थानां स्रोतसां गङ्गा समुद्रः सरसामहम् ।

आयुधानां धनुर्हं त्रिपुरघ्नो धनुष्मताम् ॥ २० ॥

tīrthānām srotasām gaṅgā samudraḥ sarasām aham āyudhānām dhanur aham tripura-ghno dhanuṣmatām

अर्थ: पावन स्रोतों में मैं गंगा हूँ, और स्थिर जलाशयों में समुद्र; आयुधों में मैं धनुष हूँ, और धनुष धारण करने वालों में त्रिपुरासुर-नाशक भगवान् शिव। (स्कन्ध 11, अध्याय 16, श्लोक 20)

वे महान् धाम में मेरु हैं, तथा दुर्गम स्थानों में हिमालय; वृक्षों में पीपल, तथा वार्षिक ओषधियों में यव। वे पुरोहितों में वसिष्ठ हैं, वेद-भक्तों में बृहस्पति, सेनापतियों में स्कन्द, तथा धर्म-पथ के मार्गदर्शकों में स्वयं ब्रह्मा। यज्ञों में वे नित्य वेद-पाठ रूपी ब्रह्मयज्ञ हैं, व्रतों में अहिंसा, तथा शुद्धिकारक तत्त्वों में वायु, अग्नि, सूर्य, जल तथा ब्राह्मण की सत्य वाणी में निहित पवित्रता (श्लोक २१-२३)।



पावन स्रोतों में भगवान् गंगा हैं, तथा स्थिर जलाशयों में समुद्र — प्रकृति में छिपी वे विभूतियाँ जो मन को शान्तिपूर्वक उनकी ओर लौटाती हैं (श्लोक 20)।

सद्गुणों, ऋतुओं तथा ज्ञानियों में

योग के अंगों में वे समाधि हैं; विजय चाहने वालों में सुदृढ़ राजनीति; सम्यक् ज्ञान के शास्त्रों में प्रकृति-पुरुष के भेद का विज्ञान; तथा दृष्टि पर वाद-विवाद करने वालों में उनका सन्देह स्वयं। स्त्रियों में वे शतरूपा हैं, स्वायम्भुव मनु की सहधर्मिणी; पुरुषों में मनु स्वयं; तपस्वियों में नारायण ऋषि; तथा नित्य-ब्रह्मचारियों में सनत्कुमार। धर्मों में वे संन्यास हैं; निर्भयता के साधनों में बाह्य विषयों से हटा हुआ चिन्तन; गोपनीयता के उपायों में मधुर वाणी तथा मौन; तथा आदि युगलों में ब्रह्मा स्वयं, जो नर तथा नारी दोनों बने। जाग्रत रहने वालों में वे संवत्सर हैं; ऋतुओं में चैत्र-वैशाख के मास; महीनों में मार्गशीर्ष; नक्षत्रों में अभिजित्। चार युगों में वे सत्ययुग हैं; आत्मसंयमियों में असित तथा देवल ऋषि; वेदों के संकलनकर्ताओं में कृष्ण द्वैपायन व्यास; तथा ज्ञानियों में आत्मज्ञ शुक्राचार्य (श्लोक २४-२८)।

मेरे भक्तों में, मैं तुम हो, उद्धव

यहाँ भगवान् का स्वर अत्यन्त व्यक्तिगत हो उठता है, और यह विशाल गणना क्षण भर के लिए अपने प्रिय मित्र को एक निजी उपहार बन जाती है।

वासुदेवो भगवतां त्वं तु भागवतेष्वहम् ।

किम्पुरुषाणां हनुमान् विद्याधराणां सुदर्शनः ॥ २९ ॥

vāsudevo bhagavatām tvaṁ tu bhāgavateṣv aham kimpuruṣānām hanumān vidyādhraṇām sudarśanaḥ

अर्थ: दिव्य पुरुषों में मैं वासुदेव हूँ, और मेरे भक्तों में, हे उद्धव, मैं तुम हो; किम्पुरुषों में मैं हनुमान् हूँ, तथा विद्याधरों में सुदर्शन। (स्कन्ध 11, अध्याय 16, श्लोक 29)



अपनी विशाल विभूति-गणना के बीच, भगवान् मुड़कर सरलता से कहते हैं, "मेरे भक्तों में, मैं तुम हो, उद्धव" (श्लोक 29)।

रत्नों में वे पद्मराग हैं, तथा सुन्दर वस्तुओं में कमल-कोश; दर्भ-जातियों में कुश, तथा हवि में गव्य घृत। धन के लिए प्रयास करने वालों में वे धन स्वयं हैं; छलियों में छल; वे सहन करने वालों का सहन तथा वीरों का शौर्य हैं। वे बलवानों के शरीर तथा मन की शक्ति हैं, तथा भक्तों द्वारा किया गया प्रत्येक कर्म उनका अपना है; तथा सात्वतों द्वारा पूजित नौ दिव्य रूपों में वे वासुदेव हैं, प्रथम तथा सर्वश्रेष्ठ (श्लोक ३०-३२)।

जल के रस, अग्नि के तेज तथा आकाश की ध्वनि में

गन्धर्वों तथा अप्सराओं में वे विश्वावसु तथा पूर्वचित्ति हैं; वे पर्वतों की स्थिरता हैं, तथा पृथ्वी की सुगन्ध (श्लोक ३३)। वे जल में रहने वाला सूक्ष्म रस हैं, तथा सबसे तेजस्वियों में अग्नि।

अपां रसश्च परमस्तेजिष्ठानां विभावसुः ।

प्रभा सूर्येन्दुताराणां शब्दोऽहं नभसः परः ॥ ३४ ॥

apām rasaś ca paramas tejiṣṭhānām vibhāvasuḥ prabhā sūryendu-tārāṇām śabdo 'haṁ nabhasaḥ parah

अर्थ: मैं जल में रहने वाला सूक्ष्म रस हूँ, तथा सबसे तेजस्वियों में अग्नि; मैं सूर्य, चन्द्रमा तथा तारों में चमकने वाला प्रकाश हूँ, तथा आकाश से भी परे व्याप्त शब्द मैं ही हूँ। (स्कन्ध 11, अध्याय 16, श्लोक 34)

वे ब्राह्मण-भक्तों में बलि हैं, तथा वीरों में अर्जुन; वे स्वयं प्राणियों की उत्पत्ति, स्थिति तथा अन्तिम प्रलय हैं। वे इन्द्रियों की समस्त वृत्तियाँ हैं — गति, वाणी, त्याग, ग्रहण तथा भोग, और स्पर्श, दर्शन, स्वाद, श्रवण तथा गन्ध की शक्ति — वास्तव में प्रत्येक इन्द्रिय में निहित बोध-शक्ति स्वयं। वे सात सूक्ष्म तत्त्व हैं जो कारण तथा कार्य दोनों हैं — पृथ्वी, वायु, आकाश, जल, अग्नि, अहंकार तथा महत्तत्त्व — उनकी विकृतियाँ, जीव, अव्यक्त प्रकृति, तीनों गुण, तथा स्वयं ब्रह्म; वे इन तत्त्वों की गणना, उनका ज्ञान, तथा उनके पीछे छिपे सत्य का साक्षात्कार भी हैं (श्लोक ३५-३७)।

मुझसे भिन्न कहीं कुछ भी नहीं है

यह महान् गणना अब एक अभिभूत कर देने वाले सत्य में समाहित होती है।

मयेश्वरेण जीवेन गुणेन गुणिना विना ।

सर्वात्मनापि सर्वेण न भावो विद्यते क्वचित् ॥ ३८ ॥

mayaśvareṇa jīvena guṇena guṇinā vinā sarvātmanāpi sarveṇa na bhāvo vidyate kvacit

अर्थ: मुझसे भिन्न — अर्थात् ईश्वर, जीव, तीनों गुण तथा उनसे बने समस्त पदार्थ, सबके आत्मा तथा सब कुछ स्वयं — कहीं भी कुछ भी विद्यमान नहीं है। (स्कन्ध 11, अध्याय 16, श्लोक 38)

भगवान् उद्धव को बताते हैं कि समय के साथ वे विद्यमान प्रत्येक परमाणु की गणना कर सकते हैं, परन्तु अपनी विभूतियों की गणना कभी नहीं, क्योंकि वे करोड़ों ब्रह्माण्डों की रचना करते हैं।

तेजः श्रीः कीर्तिरैश्वर्यं ह्रीस्त्यागः सौभगं भगः ।

वीर्यं तितिक्षा विज्ञानं यत्र यत्र स मेऽशकः ॥ ४० ॥

tejaḥ śrīḥ kīrtir aiśvaryam hrīś tyāgaḥ saubhagaḥ bhagaḥ vīryam titikṣā vijñānam yatra yatra sa me 'mśakaḥ

अर्थ: जहाँ कहीं भी तेज, श्री, कीर्ति, ऐश्वर्य, लज्जा, त्याग, सौभाग्य, भाग्य, वीर्य, सहनशीलता अथवा सच्चा ज्ञान हो, उसे मेरी अपनी महिमा का एक अंश ही समझो। (स्कन्ध 11, अध्याय 16, श्लोक 40)

यही इस उपदेश का मूल भाव है। भगवान् उद्धव के सम्मुख इन अनन्त विभूतियों को केवल प्रशंसा के लिए नहीं बिखेरते, जैसे कोई भण्डार में रत्नों की गिनती करता है। वे इन्हें इसलिए देते हैं कि उनके भक्त की दृष्टि, जहाँ कहीं भी पड़े — किसी नदी पर, किसी ऋषि पर, किसी ऋतु पर, किसी फूल पर — कोमलता से उनकी ओर वापस खिंच जाए, और वस्तुओं की सतह पर कभी सन्तुष्ट न रहे। हर उत्कृष्टता एक द्वार बन जाती है; और जो मन सर्वत्र उस द्वार को देखने का अभ्यस्त हो जाता है, वह शीघ्र ही उसके भीतर सदा खड़े उस एक को भूल नहीं पाता। इसीलिए यह गणना अब और लम्बी सूची में नहीं, अपितु उपदेश में समाप्त होती है।

समस्त विभूतियों से परे — वाणी, मन तथा प्राण को भगवान् में समेटना

उद्धव को सम्पूर्ण तेजोमय जगत् अपनी ही महिमा के रूप में दिखाकर, भगवान् अब कोमलता से इस सम्पूर्ण सूची को एक ओर रख देते हैं।

एतास्ते कीर्तिताः सर्वाः सङ्क्षेपेण विभूतयः ।
मनोविकारा एवैते यथा वाचाभिधीयते ॥ ४१ ॥

etās te kīrtitāḥ sarvāḥ saṅkṣepeṇa vibhūtayaḥ mano-vikārā evaite yathā vācābhidhīyate

अर्थ: ये सब, संक्षेप में, मैंने तुम्हें बताई मेरी विभूतियाँ हैं; अन्ततः ये तो मन के विकार ही हैं, जो केवल वाणी द्वारा व्यक्त किए जाने पर रूप धारण करते हैं। (स्कन्ध 11, अध्याय 16, श्लोक 41)

अब महत्त्वपूर्ण यह सूची नहीं, अपितु इसे सुनने वाला है, वे कहते हैं।

वाचं यच्छ मनो यच्छ प्राणान् यच्छेन्द्रियाणि च ।
आत्मानमात्मना यच्छ न भूयः कल्पसेऽध्वने ॥ ४२ ॥

vācam yaccha mano yaccha prāṇān yacchedriyāṇi ca ātmānam ātmanā yaccha na bhūyaḥ kalpase 'dhvane

अर्थ: अपनी वाणी को वश में करो, अपने मन को वश में करो, अपने प्राण को वश में करो, तथा अपनी इन्द्रियों को वश में करो; अपने आपको अपने ही द्वारा वश में करो, और फिर तुम जन्म-मृत्यु के पथ पर नहीं डाले जाओगे। (स्कन्ध 11, अध्याय 16, श्लोक 42)

जो साधक समुचित विवेक से अपनी वाणी तथा मन को वश में नहीं करता, भगवान् चेतावनी देते हैं, उसके व्रत, तपस्या तथा दान कच्चे घट से रिसते जल के समान बिना जाने ही बह जाते हैं। वे उस एक अभ्यास से समापन करते हैं जो शेष सब कुछ को एक साथ बाँधे रखता है।

तस्माद्वचोमनःप्राणान् नियच्छेन्मत्परायणः ।
मद्भक्तियुक्तया बुद्ध्या ततः परिसमाप्यते ॥ ४४ ॥

tasmād vaco manaḥ prāṇān niyacchen mat-parāyaṇaḥ mad-bhakti-yuktayā buddhyā tataḥ parisamāpyate

अर्थ: अतः मुझमें परायण साधक मेरी भक्ति से युक्त बुद्धि के द्वारा वाणी, मन तथा प्राण को वश में करे; इसी से उसकी यात्रा पूर्णता को प्राप्त होती है। (स्कन्ध 11, अध्याय 16, श्लोक 44)



उद्धव को सम्पूर्ण तेजोमय जगत् अपनी महिमा के रूप में दिखाकर, भगवान् उन्हें वाणी, मन, प्राण तथा इन्द्रियों को वश में करने का आह्वान करते हैं, केवल उन्हीं में भक्तिपूर्वक विश्राम करते हुए (श्लोक 42)।

इस अध्याय की प्रमुख शिक्षाएँ

1. भगवान् प्रत्येक प्राणी के आत्मा, सुहृद् तथा ईश्वर हैं। वे केवल दूरी से सृष्टि के कारण नहीं हैं; वे प्रत्येक प्राणी के भीतर स्वयं आत्मा हैं, उसके शुभचिन्तक, तथा वे ही हैं जो उसे उत्पन्न करते हैं, पालते हैं तथा फिर अपने में समेट लेते हैं (श्लोक 9)।
2. जगत् की हर उत्कृष्टता उनकी अपनी महिमा का अंश है। किसी भी वर्ग के प्राणियों में जो भी सबसे बलवान्, शुद्ध अथवा सुन्दर है — देवताओं, ऋषियों, नदियों, ऋतुओं, सद्गुणों अथवा प्राणियों में — भगवान् उसे उस रूप में स्वयं अपना नाम देते हैं (श्लोक 10-37)।
3. विभूतियाँ मन को केवल प्रशंसा के लिए नहीं, मन को घर लौटाने के लिए दी गई हैं। यह दिखाकर कि जहाँ कहीं महिमा, शक्ति अथवा ज्ञान मिले, वह उनकी अपनी ही महिमा का अंश है, भगवान् भक्त की दृष्टि को प्रत्येक उत्कृष्ट वस्तु से होकर उसके स्रोत पर टिकने का प्रशिक्षण देते हैं (श्लोक 40)।
4. उनसे भिन्न कहीं कुछ भी नहीं है। वे एक ही साथ परमेश्वर, जीव, प्रकृति के तीनों गुण तथा उनसे बनी समस्त श्रेणियाँ हैं; उनके बाहर कहीं भी कोई पृथक् सत्ता नहीं है (श्लोक 38)।
5. उनकी विभूतियाँ गिनती द्वारा कभी समाप्त नहीं हो सकतीं। वे यद्यपि विद्यमान प्रत्येक परमाणु की गणना कर सकते हैं, तथापि उनकी अपनी विभूतियाँ गणना से परे ही रहती हैं, क्योंकि वे करोड़ों ब्रह्माण्डों की रचना करते हैं (श्लोक 39)।
6. विभूतियों की सूची लक्ष्य नहीं है — आत्म-संयम ही लक्ष्य है। यह सब विस्मय, अन्ततः, मात्र वचन हैं; सच्ची शिक्षा है वाणी, मन, प्राण तथा इन्द्रियों को वश में करना, अपने आपको अपने ही द्वारा जीतना, जिससे जन्म-मृत्यु के पथ से मुक्ति मिले (श्लोक 41-42)।
7. भक्ति ही इस संयम को पूर्ण करती है। भगवान् की भक्ति से युक्त बुद्धि ही अन्त में वाणी, मन तथा प्राण को शान्त कर यात्रा को पूर्णता तक पहुँचाती है (श्लोक 44)।

एक भाक्तेपूर्ण चिन्तन

मुझे इस अध्याय में सबसे अधिक जो स्पर्श करता है, वह यह है कि भगवान् उद्धव की उत्कण्ठा का उत्तर एक शुष्क सूची से नहीं, अपितु अपनी सृष्टि के प्रति प्रेम से भरे हुए प्रवाह से देते हैं। वे गंगा तथा हिमालय की, चन्द्रमा तथा सिंह की, साधारण यव तथा सुन्दर कमल-कोश की बात करते हैं, जैसे प्रत्येक वस्तु उनके लिए अपने ढंग से प्रिय हो — क्योंकि वास्तव में प्रत्येक वस्तु उनके अपने हाथ की छाप है। और फिर, इस विशाल गणना के बीच, वे मुड़कर एक मनुष्य का नाम लेते हैं: “मेरे भक्तों में, मैं तुम हो, उद्धव।” इस सम्पूर्ण अध्याय में इस शान्त वाक्य से बड़ी कोई महिमा नहीं है। यह इस शास्त्र के प्रत्येक पाठक को बताता है कि वही निकटता हमें भी प्राप्त है — कि सूर्य तथा पावन नदी में व्याप्त भगवान् उस हृदय में भी उतने ही उपस्थित हैं जो केवल उन्हें प्रेम करता है। फिर भी यह अध्याय हमें आश्चर्य में ही विश्राम करने नहीं देता। यह हमारा ध्यान इस चमकदार सूची से हटाकर हमारी अपनी वाणी, मन तथा प्राण की ओर लौटाकर समाप्त होता है, यह स्मरण कराते हुए कि सर्वत्र भगवान् की महिमा देखना केवल आरम्भ है; हमें दिया गया कार्य यह है कि हम धैर्यपूर्वक तथा भक्तिपूर्वक अपने आपको समेटें, जब तक कि हम उन्हीं में विश्राम न कर लें।

एक दैनिक भक्ति-अभ्यास

आज, कोई एक साधारण वस्तु चुनिए जिसका सामना आप प्रायः करते हैं — कोई नदी, कोई वृक्ष, प्रभात की किरण, अथवा अपना ही श्वास — और कुछ क्षणों के लिए इसे स्मरण कराने दें कि इसमें जो भी उत्कृष्ट अथवा सुन्दर है, वह भगवान् की अपनी महिमा का एक अंश है। तत्पश्चात्, उद्धव को दिए गए भगवान् के अपने अन्तिम उपदेश का अनुसरण करते हुए, शान्त होकर बैठिए तथा अपनी वाणी, मन तथा प्राण को कोमलता से भीतर समेटकर केवल उन्हीं पर स्थिर कर दें। उनके पवित्र नाम का धीरे से जप करें: “ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।” तथा इस संयम के छोटे कर्म को उन्हीं को अपनी भक्ति के रूप में अर्पित करें। इस सरल अभ्यास में आप उद्धव के लिए निर्धारित उसी मार्ग पर चलते हैं — सर्वत्र उनकी महिमा देखना, और फिर शान्तिपूर्वक प्रत्येक बिखरी इन्द्रिय को उनके घर लौटाना।

उपसंहार

एकादश स्कन्ध के इस षोडश प्रवचन में, उद्धव अपने प्रिय भगवान् से उन विभूतियों को बताने की प्रार्थना करते हैं जिनके द्वारा भक्त उन्हें सरलतापूर्वक स्मरण तथा प्राप्त कर सके, और भगवान् श्रीकृष्ण उसी शिक्षा से उत्तर देते हैं जो उन्होंने कुरुक्षेत्र में अर्जुन को दी थी: कि वे ही समस्त प्राणियों के आत्मा, सुहृद् तथा ईश्वर हैं। तत्पश्चात् वे सम्पूर्ण सृष्टि के माध्यम से स्वयं को उद्घाटित करते हैं — काल तथा मन में, ॐ तथा वेदों में, देवताओं तथा ऋषियों में, गंगा तथा हिमालय में, सद्गुणों तथा ऋतुओं में, और सबसे अधिक कोमलता से, अपने ही भक्त उद्धव में। जहाँ कहीं भी बल तथा सौन्दर्य है, वे घोषित करते हैं, वह उनकी महिमा का एक अंश है, जो गिनती से कभी समाप्त नहीं हो सकता। परन्तु यह सब दिखाकर, वे इस सम्पूर्ण सूची को कोमलता से एक ओर रख देते हैं, और उद्धव को इसके स्थान पर अपनी वाणी शान्त करने, मन को स्थिर करने, प्राण को सँभालने तथा इन्द्रियों को भक्ति से युक्त बुद्धि के द्वारा वश में करने का आह्वान करते हैं — क्योंकि केवल यही, और विस्मयों की सूची कितनी भी विशाल क्यों न हो, आत्मा की दीर्घ यात्रा को उसके सच्चे अन्त तक पहुँचाता है।

श्रीमद्भागवतम् की दिव्य वाणी हमारे हृदयों में शुद्ध भक्ति जगाए।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

जय श्री माधव।

सन्दर्भ तथा आभार

- मूल संस्करण: गीता प्रेस, श्रीमद्भागवत महापुराण (अंग्रेज़ी, सम्पूर्ण), एकादश स्कन्ध, षोडश प्रवचन, पृष्ठ 584–588।
- श्रृंखला: श्रीमद्भागवतम् विज्ञान • बिस्वा सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट।
- पण्डित डॉ. श्री काशीनाथ मिश्र के आध्यात्मिक मार्गदर्शन तथा अनुशंसा के अनुसार प्रस्तुत।

यह लेखक के अपने शब्दों में एक मौलिक, श्रद्धापूर्ण पुनर्कथन है, जिसमें संक्षिप्त उद्धृत श्लोक देवनागरी तथा लिप्यन्तरण में दिए गए हैं और उनके अर्थ सारांश रूप में हैं। यह किसी एक प्रकाशक के निरन्तर अनुवाद या टीका का पुनरुत्पादन नहीं है। किसी प्रकाशक से किसी सम्बन्ध या समर्थन का दावा नहीं किया गया है।

॥ हरि ॐ तत्सत् ॥

जय श्री माधव

ऑनलाइन पढ़ें: kalkiabatara.org/hi/blog-srimad-bhagavatam-skandh-11-adhyay-16-bhagavan-ki-vibhuti-hi.html

श्रीमद्भागवतम् विज्ञान • कल्कि अवतार इंटरनेशनल • बिस्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट

